# पाठ - 8

G8T5DH

## *आदि गुरु शंकराचार्य*

**नदी की वेगवती धारा में माँ-बेटे घिर गए थे। बेटे ने माँ से कहा- ''यदि आप मुझे सन्यास लेने की आज्ञा दें तो मैं बचने की चेष्टा करूँ, अन्यथा यहीं डूब जाऊँगा। उसने अपने हाथ-पैर ढीले छोड़ दिए। पुत्र को डूबता देखकर उसकी माँ ने स्वीकृति दे दी। पुत्र ने स्वयं तथा माँ दोनों को बचा लिया।"**

**- यह बालक शंकराचार्य थे।**

**- श्ंाकराचार्य के मन में बचपन से ही संन्यासी बनने की प्रबल इच्छा जाग उठी थी।**

**- माँ की अनुमति मिलने पर वे संन्यासी बन गए।**

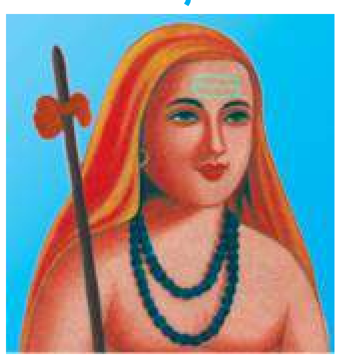

शंकराचार्य के बचपन का नाम श्ंाकर था। इनका जन्म दक्षिण भारत के केरल प्रदेश में पूर्णा नदी के तट पर स्थित कालडी ग्राम में आज से लगभग बारह सौ वर्ष पहले हुआ था। इनके पिता का नाम शिवगुरु तथा माता का नाम आर्यम्बा था। इनके पिता बड़े विद्वान थे तथा इनके पितामह भी वेद-शास्त्र के प्रकाण्ड विद्वान थे। इनका परिवार अपने पांडित्य के लिये विख्यात था।

इनके बारे में ज्योतिषियों ने भविष्यवाणी की थी - 'आपका पुत्र महान विद्वान, यशस्वी तथा भाग्यशाली होगा' इसका यश पूरे विश्व में फैलेगा और इसका नाम अनन्त काल तक अमर रहेगा'। पिता शिवगुरु यह सुनकर बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने अपने पुत्र का नाम शंकर रखा। ये अपने माँ-बाप की इकलौती सन्तान थे। शंकर तीन ही वर्ष के थे कि इनके पिता का देहान्त

हो गया। पिता की मृत्यु के बाद मंाँ आर्यम्बा श्ंाकर को घर पर ही पढ़ाती रही। पंाँचवे वर्ष उपनयन संस्कार हो जाने पर माँ ने इन्हें आगे अध्ययन के लिए गुरु के पास भेज दिया। शंकर कुशाग्र एवं अलौकिक बुद्धि के बालक थे। इनकी स्मरण शक्ति अद्भ्ुत थी। जो बात एक बार पढ़ लेते या सुन लेते उन्हें याद हो जाती थी। इनके गुरु भी इनकी प्रखर मेधा को देखकर आश्चर्यचकित थे। श्ंाकर कुछ ही दिनों में वेदशास्त्रों एवं अन्य द्दर्मग्रन्थों में पारंगत हो गये। शीघ्र ही इनकी गणना प्रथम कोटि के विद्वानों में होने लगी।

शंकर गुरुकुल में सहपाठियों के साथ भिक्षा माँगने जाते थे। वे एक बार कहीं भिक्षा माँगने गये। अत्यन्त विपन्नता के कारण गृहस्वामिनी भिक्षा न दे सकी अतः रोने लगी। श्ंाकर के हृदय पर इस घटना का गहरा प्रभाव पड़ा।

विद्या अध्ययन समाप्त कर शंकर घर वापस लौटे। घर पर वे विद्यार्थियों को पढ़ाते तथा माँ की सेवा करते थे। इनका ज्ञान और यश चारों तरफ फैलने लगा। केरल के राजा ने इन्हें अपने दरबार का राजपुरोहित बनाना चाहा किन्तु इन्होंने बड़ी विनम्रता से अस्वीकार कर दिया। राजा स्वयं शंकर से मिलने आये।

उन्होंने एक हजार अशर्फियाँ इन्हें भेंट कीं और इन्हें तीन स्वरचित नाटक दिखाये। श्ंाकर ने नाटकों की प्रशंसा की किन्तु अशर्फियाँ लेना अस्वीकार कर दिया। श्ंाकर के त्याग एवं गुणग्राहिता के कारण राजा इनके भक्त बन गए।

अपनी माँ से अनुमति लेकर शंकर ने संन्यास ग्रहण कर लिया। माँ ने अनुमति देते समय शंकर से वचन लिया कि वे उनका अन्तिम संस्कार अपने हाथांे से ही करेंगे। यह जानते हुए भी कि संन्यासी यह कार्य नहीं कर सकता उन्होंने माँ को वचन दे दिया। माँ से आज्ञा लेकर शंकर नर्मदा तट पर तप में लीन संन्यासी गोविन्दनाथ के पास पहुँचे। शंकर जिस समय वहाँ पहुँचे गोविन्दनाथ एक गुफा में समाधि लगाये बैठे थे । समाधि टूटने पर शंकर ने उन्हें प्रणाम किया और बोले -‘मुझे संन्यास की दीक्षा तथा आत्मविद्या का उपदेश दीजिए।’ गोविन्दनाथ ने इनका परिचय पूछा तथा इनकी बातचीत से बड़े प्रभावित हुए। उन्होंने संन्यास की दीक्षा दी और इनका नाम श्ंाकराचार्य रखा। वहाँ कुछ दिन अध्ययन करने के बाद वे गुरु की अनुमति लेकर सत्य की खोज के लिए निकल पड़े। गुरु ने उन्हें पहले काशी जाने का सुझाव दिया।

शंकराचार्य काशी में एक दिन गंगा स्नान के लिए जा रहे थे। मार्ग में एक चांडाल मिला। श्ंाकराचार्य ने उसे मार्ग से हट जाने के लिए कहा। उस चांडाल ने विनम्र भाव से पूछा - ‘महाराज ! आप चांडाल किसे कहते हैं ? इस शरीर को या आत्मा को ? यदि शरीर को तो वह नश्वर है और जैसा अन्न-जल का आपका शरीर वैसा ही मेरा भी। यदि शरीर के भीतर की आत्मा को, तो वह सबकी एक है, क्योंकि ब्रह्म एक है। शंकराचार्य को उसकी बातों से सत्य का ज्ञान हुआ और उन्होंने उसे धन्यवाद दिया।

काशी में शंकराचार्य का वहाँ के प्रकाण्ड विद्वान मंडन मिश्र से शास्त्रार्थ हुआ। यह शास्त्रार्थ कई दिन तक चला। मंडन मिश्र तथा उनकी पत्नी भारती का बारी-बारी से इनसे शास्त्रार्थ हुआ। पहले श्ंाकराचार्य भारती से हार गए किन्तु पुनः शास्त्रार्थ होने पर वे जीते। मंडन मिश्र तथा उनकी पत्नी शंकराचार्य के शिष्य बन गये।
महान कर्मकाण्डी कुमारिल भट्ट से शास्त्रार्थ करने के लिए वे प्रयागधाम गए। भट्ट बड़े-बड़े विद्वानों को परास्त करने वाले दिग्विजयी विद्वान थे।
संन्यासी शंकराचार्य विभिन्न स्थानों पर भ्रमण करते रहे। वे श्रंृगेरी में थे तभी माता की बीमारी का समाचार मिला। वह तुरन्त माँ के पास पहुँचे। वह इन्हें देखकर बड़ी प्रसन्न हुईं। कहते हैं कि इन्होंने माँ को भगवान विष्णु का दर्शन कराया और लोगों के विरोध करने पर भी माँ का दाह-संस्कार किया।
शंकराचार्य ने धर्म की स्थापना के लिए सम्पूर्ण भारत का भ्रमण किया। उन्होंने भग्न मंदिरों का जीर्णाेद्धार कराया तथा नये मन्दिरों की स्थापना की। लोगों को राष्ट्रीयता के एक सूत्र में पिरोने के लिए उन्होंने भारत के चारों कोनों पर चार धामों(मठों) की स्थापना की। इनके नाम हैं - श्री बदरीनाथ, द्वारिकापुरी, जगन्नाथपुरी तथा श्री रामेश्वरम्। ये चारों धाम आज भी विद्यमान हैं। इनकी शिक्षा का सार है -
"ब्रह्म सत्य है तथा जगत मिथ्या है" इसी मत का इन्होंने प्रचार किया।
शंकराचार्य बड़े ही उज्जवल चरित्र के व्यक्ति थे। वे सच्चे संन्यासी थे तथा उन्होंने अनेक ग्रन्थों की रचना की। इन्होंने भाष्य, स्तोत्र तथा प्रकरण ग्रन्थ भी लिखे। इनका देहावसान मात्र 32 वर्ष की अवस्था में हो गया। उनका अन्तिम उपदेश था-

**हे मानव! तू स्वयं को पहचान, स्वयं को**
**पहचानने के बाद तू ईश्वर को पहचान जायेगा।**

## *अभ्यास प्रश्न*

1. बालक शंकर के विषय में ज्योतिषियों ने क्या कहा था ?
2. गुरु श्ंाकराचार्य को सत्य का ज्ञान कहाँ और कैसे हुआ ?
3. गुरु श्ंाकराचार्य का अन्तिम उपदेश क्या था ?
4. इन्हें आदि गुरु श्ंाकराचार्य क्यों कहते हैं ?
5. गुरु शंकराचार्य द्वारा कौन से मठों की स्थापना की गई है ?
6. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

Û इनका परिवार............. के लिए विख्यात था।
Û इनके गुरु भी इनकी............. को देखकर आश्चर्यचकित थे।
Û गुरु शंकराचार्य का देहावसान मात्र................... वर्ष की अवस्था में हो गया।